जीने का महापुरुषीय अंदाज

डॉ. एम. डी. थॉमस

ज़िन्दगी जीने के लिए है। लेकिन जीने का एक ढंग नहीं है। हर इन्सान का जीने का कुछ अपना-अपना तरीका है। भिन्न-भिन्न समुदायों में भी जीने के तौर-तरीके अलग-अलग हैं। इनमें 'क्या सही, क्या गलत' यह कहना मुश्किल है। परन्तु, जिन्दगी की हार-जीत या कामयाबी इन्हीं सलीकों पर निभर है। इन्सानी ज़िन्दगी को तय करने में दुनिया के महापुरुषों के कुछ अनोखे अन्दाज़ रहे। इन्सानियत और अध्यात्म के मूल्यों को एक साथ उजागर करने वाले ये अन्दाज किसी समुदाय विशेष को निजी धरोहर न होकर सार्वभौम है। इनके साक्ष्य पर इन्सानी ज़िन्दगी जीने की कला क्या है, इस लेख में कुछ इन्हीं बातों की चर्चा हो रही है।

जग-ज़ाहिर चिन्तक बर्नाड शॉ का कहना है — 'यदि तुम वास्तव में कुछ करना चाहते हो, तो तुम्हारा कोई धर्म होना चाहिए'। उनका मतलब यह कतई नहीं कि आप धार्मिक परम्पराओं तथा साधनाओं से होकर गुजरें। उनका मतलब है — 'धर्म प्रेरणा देने वाला तत्व है'। मेरा धर्म मुझसे यह बात कहलवाता है। मेरा धर्म मुझसे यह काम करवाता है। मेरा धर्म ही मेरी ज़िन्दगी को दिशा देता है। धर्म का यह रूप भारतीय परम्परा में मौजूद धर्म की धारणा से मेल खाता है। धर्म का मूल अर्थ 'धारण करना' है। जो धारण करता है, वह खुद धर्म बनता है। जिसे धारण किया जाय, वह भी धर्म है। धारण करने का मतलब है — ज़िम्मेदारी लेना। हमें खुद की ज़िम्मदारी लेनी है, साथ ही, दूसरे की ज़िम्मदारी भी। एक दूसरे की ज़िन्दगी को धारण करे, इसी में धर्म का असली भाव है।

जैन-दर्शन में एक बहुत ही अच्छी बात है — 'जीओ और जीने दो'। अपनी ज़िन्दगी खुद जीना पहला धर्म है। दूसरों को अपनी ज़िन्दगी जीने देना दूसरा धर्म भी। लेकिन मैं इसाई नज़रिये से एक तीसरा धर्म भी जोड़ना चाहूँगा। वह है — 'जीने की मदद करो'। एक दूसरे को जीने की मदद करे, इसी में बाकायदा दूसरे की ज़िन्दगी को धारण करने का भाव निहित है। 'परहित सरिस धर्म नहिं भाई'। दूसरे की भलाई करने से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। तुलसीदास की इस बात का भी बस यही मतलब है। ईसा ने, गुरु और प्रभु होकर भी, अपने शिष्यों के पैर धोये और उन्हें एक दूसरे के पैर धोने की तालीम दी। सामाजिक जीवन को सुचारू रूप से जीने के लिए, आपसी लेन-देन में रिश्ते को मज़बूत बनाये रखने के लिए, विनम्र पर-सेवा के इस पाठ से बढ़कर कोई कारगर तरीका और क्या हो सकता है !

महात्मा कबीर की दो मशहूर पंक्तियाँ धर्म के सामाजिक पहलू को उजागर करने में बहुत ही प्रासंगिक हैं। 'बहता पानी निर्मला, बन्दा गन्दा होय। साधू जन रमता भला, दाग न लागे कोय।।' धर्म और इन्सानियत पर दाग नहीं लगे, वे साफ--सुथरा रहे, उसके लिए इन्सान को बहते पानी के समान एक दूसरे की ओर चलते रहना चाहिए। सामाजिक जीवन में समरसता लाने का यही गुरुमन्त्र है। समाज में मौजूद भिन्न-भिन्न परम्पराएं न द्वीप के सामन रहें, न समान्तर रेखाओं-जैसे चलें भी। उनमें आपसी सरोकार और सहयोग की भावना रहे, यही वक्त की ज़रूरत है, तकाज़ा भी। विभिन्न महापुरुषों, धर्मगन्थों तथा धर्म-दर्शनों की बातें सबको जोड़ने में सहायक है। सांइबाबा ने 'सबका मालिक एक' कहकर ज़िन्दगी की हकीकत को निचौड़कर रखा है। श्री नारायण गुरु का मानना है — 'मज़हब हो कोई भी, इन्सान भला सो भला'। अच्छा इन्सान बनना ज़िन्दगी का आखिरी सच है। महात्मा कबीर का आध्यात्मिक एहसास उतना ऊँचा था कि वे कह उठे — 'जित देखूँ तित तूँ'। उन्हें सब में खुदा ही खुदा नज़र आता है। बौद्ध दर्शन के मुताबिक 'मध्यम मार्ग' को अपनाना ही फायदेमन्द है। जैन दर्शन ने 'अनेकान्तवाद' को मानकर हकीकत के बहुआयामोपन पर ज़ोर दिया है। भागवतगीता ने 'निष्काम कर्म' की बात करके जीने के अलौकिक अन्दाज़ को ज़ाहिर किया। 'मेरे इन भाइयों या बहनों केलिए, वे चाहे कितना ही छोटा क्यों न हों, जो कुछ किया, वह तुमने मेरे लिए ही किया' — ऐसा कहकर ईसा ने पूरी आध्यात्मिकता को सह-इन्सानों के साथ किये जाने वाले व्यवहार पर घटित किया। उपनिषद् ने 'सर्वे भवन्तु: सुखिन:' कहकर मानो सब कुछ कह दिया हो। ये सभी बातें किसी एक समुदाय विशेष का न होकर समूची इन्सानी समाज की

आध्यात्मिक धरोहर है। इसलिए भिन्न-भिन्न परम्पराओं मं पले-बढ़े इन्सानों को एक दूसरे का सम्मान करना होगा, एक दूसरे से सीखना होगा और एक दूसरे से आपसी सरोकार और सहयोग की भावना बनाये रखना होगा। यही जीने की कला है। समाज के अलग-अलग समुदाय और इकाइयाँ एक दूसरे से इस प्रकार जुड़े रहे, मानो वे 'एक शरीर के अनेक अंग हों', इसी मं समाज का कल्याण है। इस प्रकार समाज मं तालमल और एकता का भाव बना रहे, महात्मा कबोर के 'बहता पानी' का बस यही मतलब है। अंगेज़ी साहित्य के मशहूर कवि लोंगफेलो की एक पंक्ति है — 'लेट एवरी टुमोरो फाइन्ड यू फ़ारदर दैन टुडे'। मतलब है — आपका हर दिन आपको आगे बढ़े हुए पाये। आप हर दिन प्रगति करते रहें। अपनी ज़िन्दगी के सफर मं आगे बढ़ी हुइ हालत का नाम है प्रगति। प्रगतिशील होना जीने का दूसरा नाम है। चलते रहना ही प्रगति करने का मतलब है। प्रगतिशील होना जागृत इन्सान की पहचान है। लेकिन, अकेले चलने से कोई भी मंज़िल तक नहीं पहुँचता। दूसरों के साथ मिलकर चलना होगा। युवाओं को समाज के बड़े-बढ़े और तजुरबकारों के साथ मिलकर चलना होगा। बड़ों को युवा पोढ़ी को साथ लेकर चलना भी होगा। इन्सान को बिजली से चलती रेल गाड़ी की एंजिन के समान हर पल खुदाई तार से छूते हुए ज़िन्दगी को जिये जाना चाहिए। इन्सान-इन्सान के दरमियान 'हम की भावना' विकसित हो और हर इन्सान दूसरे का खयाल करे, यही सार्थक ज़िन्दगी का महापुरुषीय तरीका है। इन्सानी समाज को महापुरुषों से प्रेरणा मिलती रहे और उनका एहसास सामाजिक जीवन को आध्यात्मिक ऊँचाइ की ओर अगसर करता रहे, लेखक की यही हार्दिक कामना है ।

डॉ. एम. डी. थॉमस
संस्थापक निदेशक, इंस्टिट्यूट ऑफ़ हार्मनि एण्ड पीस स्टडीज़, नयी दिल्ली
प्रथम मंजिल, ए 128, सेक्टर 19, सेक्टर 19, द्वारका, नयी दिल्ली 110075

दूरभाष: 09810535378 (p), 08847925378 (p), 011-45575378 (o)
ईमेल : mdthomas53@gmail.com (p), ihps2014@gmail.com (o)
बेबसाइट: www.mdthomas.in (p), www.ihpsindia.org (o)

Twitter: https://twitter.com/mdthomas53
Facebook: https://www.facebook.com/mdthomas53
Academia.edu: https://independent.academia.edu/MDTHOMAS